भारतेन्दु युगीन काव्य में लोक मंगलाषा

डॉ0 रवीन्द्र कुमार तिवारी
असिस्टेंट प्रोफेसर
हिन्दी विभाग
सन्त विरागी बाबा पी0जी0 कालेज, घाटमपुर, कानपुर नगर

शोध सारांष

भारतीय साहित्य और दर्षन में सदैव से ही लोक–मंगलाषा की भावना व्याप्त रही है इसीलिए भारतीय साहित्य में सत्यं षिवं सुन्दरं की प्रतिष्ठा होती है क्योंकि जो सत्य है वही कल्याणकारी है और जो कल्याणकारी है या लोकमंगल कारी है वही सुन्दर है ।

गोस्वामी तुलसीदास ने साहित्य का मर्म वर्णित करते हुये उसके लोक मांगगिक पक्ष को निरूपित करते हुये लिखा–कीरति भनिति भूति भली सोई। सुरसरिसम सब कहँ हित होई ।।

गोस्वामी जी की यही लोक भावना इन पंक्तियो में भी उद्धृत हैं।

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे संतु निरामया ।

सर्वे भद्राणि पष्यंतु मा कष्चित् दुःख भागभवेत् ।।

अर्थात् सभी सुखी रहे, सभी सांसरिक मोह माया से दूर रहे, सभी सत् कल्याण कार्यो के अभिलाषी रहें, किसी को कभी कोई दुःख न हो ।

भारतेन्दु युगीन साहित्य में यही लोक मांगलिक पक्ष फलीभूत हुआ है। भारतेन्दु के साथ उनके सहयोगी साहित्यकारों ने भी इसी जन–मांगलिक प्रत्याषा को अपने–अपने साहित्य में प्रतिफलित किया है। साहित्य का जो प्रदेय होना चाहिए, वह इस युग–चेतना में प्रतिबिम्बित होता है । निषचित रूप से इस युग का साहित्य अपने भावभूमि के प्रतिफलन में चरितार्थ है।

भारतेन्दु हरिष्चन्द्र हिन्दी साहित्य के एक ख्याति लब्ध साहित्यकार हैं जिनके श्लाघ्य कार्यो को देखकर वाणी मौन हो जाती है। वे सर्वतोन्मुखी प्रतिभा के धनी थे। उनका व्यक्तित्व मानो समस्त विधाओं का समिश्रण हो। कोई भी क्षेत्र उनसे अछूता न रहा जिस पर उनकी दृष्टि न पड़ी हो। संभवतः कबीर के बाद वही एक व्यक्तित्व थे जिसने सबकी चिन्ता की जिसका स्वरूप उनके साहित्य में परिलक्षित होता है ।

भाषा की हीन भावना से ग्रसित भारतीय समाज को 'निजभाषा उन्नति अहै' की प्रखरता से प्रतिष्ठित कर उनमें राष्ट्रवाद की भावना को जागृत किया। वे जानते थे कि भाषा ही समाज को एकता के सूत्र में बॉध

सकती है। लोक अन्तरायों को नष्ट कर समाज में लोकमंगल का विधान कर सकती है। उनका यह प्रयास फलीभूत भी हुआ। हिन्दी भाषा ने समूचे राष्ट्र को एक सूत्र में बॉध दिया। भारतेन्दु जी के व्यक्तित्व के अवलम्ब को प्राप्त कर युगाकांक्षाए साकारित हो उठी। वे युग की दृष्टि और युग द्रष्टा दोनों ही थे।

पूर्वाद्ध से उतरार्द्ध, प्राचीन से नवीन, पूर्व से पष्चिम, आषा–दुराषा के बीच जो संघर्ष छिड़ा हुआ था उसकी वे अन्तिम सफल परिणति के रूप में थे। साहित्य और समाज के संदर्भ में उनकी अमरता अक्षुण है। उनकी असमय मृत्यु ने हिन्दी साहित्य जगत को स्तब्ध कर दिया जिससे जो लोक मंगल की कामना उनके मन में थी, वह पूर्ण नही हो पाई। उनकी मृत्यु पर पं0 श्रीधर पाठक जी ने अपनी वेदना को प्रकट करते हुए लिखा –

जब लौं भारत भूमि मध्य आरज कुल बासा ।
जब लौं आरज धर्म माहि आरज विष्वासा ।।
तब लौं वह तुम्हारो नाम थिर चिरजीवी रहिहै अटल ।
नितचंद सूर सम सुमिरिहै हरिष्चन्द हूँ सज्जन सकल ।।[1]

सन् 1877 में भारतेन्दु ने हिन्दी की उन्नति पर व्याख्या लिखकर और बलिया में जनता के सामने उसे पढ़कर युग चार्टर तैयार किया –

परदेषी की बुद्धि अरू वस्तुन की करि आस ।
पर बस ह्वै कब लौं कहो रहिहौ तुम ह्वै दास।।
उठहु उदित पूरब भयों भारत भानु प्रकासा ।
उठहुँ खिलावहुँ हिय–कमल करहु तिमिर दुःख नासा ।।[2]

भारतेन्दु युगीन कवियों ने युग–साहित्य लिखा क्योंकि वे जन मानस के कवि थे । जनता की पीड़ा उनके हृदय लोक को व्यथित कर देती थी इसीलिए वे लोक मंगल के प्रतिस्थापन हेतु अनवरत अलख जगाते रहे। उस युग के साहित्य पर टिप्पणी करते हुए रामविलास शर्मा जी ने लिखा है –

"भारतेन्दु युग की सबसे बडी खूबी यह है कि वह जनता का साहित्य है।"[3]

इस युग के कवियों ने राष्ट्रीय जागरण के साथ साथ जन जागरण निमित्त भारत के प्राचीन वीरों के नामों का स्मरण करके गौरव का अनुभव किया। उन्होंने दृष्टान्त के रूप में पृथ्वीराज, राणा प्रताप , षिवाजी आदि राष्ट्रीय वीरों और उनके युद्धो को जनता के समक्ष रखा। 1882 में प्रकाषित भारतेन्दु कृत 'विजयिनी विजय् वैजन्ती' में उनकी मर्म वेदना इस रूप में प्रकट हई है–

हाय पंचनद, हा पानीपत ।

अजहूँ रहे तुम धरनि विराजत ।।

हाय चित्तौर निलज तू भारी ।

अजहू खरो भारतहि मंझारी ।।[4]

तत्कालीन जनता में व्याप्त अषिक्षा और निर्धनता पर इस युग के सभी कवियों की दृष्टि पड़ी। प्रताप नारायण मिश्र ब्रिटिष षासन के प्रति जन मानस का ध्यानावलोकन कराते हुये लिखते हैं–

सर्वरसु लिए जात अंग्रेज, हम केवल लेक्चर के तेज ।[5]

प्रेमघन जी ने जातिगत वैषम्य पर कुठाराघात किया क्योंकि वे जानते थे कि यह विचार लोक मांगलिक भाव का विध्वंसक है उन्होंने लिखा

हिदु मुस्लिम जैन पारसी ईसाई सब जात ।

सुखी होय हिए भरे प्रेमघन सकल भारती भ्रात ।।[6]

भारतेन्दु जी युग निर्माता साहित्यकार थे। अपनी मुकरियो में उन्होंने अंग्रेजी सभ्यता की वास्तविकता और तत्कालीन राजनीतिक जीवन के कारूणिक वैषम्य का यथार्थ चित्र खींचते हुए लिखा –

सब गुरूजन को बुरो बतावै, अपनी खिचड़ी आप पकावै ।

भीतर तत्व, न झूठी तेजी, क्यों सखि सज्जन नही अंग्रेरजी ।।[7]

पं0 प्रताप नारायण मिश्र ने अपनी रचना "ब्रैडला स्वागत है" में तत्कालीन समाज की दैन्य दषा का बड़ा कारूणिक बिम्ब खींचा है –

जहाँ कृषि, वाणिज्य, षिल्प सेवा माहीं ।

देसिन के हित कथा तत्व कैसेहु नाहीं ।।[8]

अंग्रेजी षासकों के अत्याचार के समक्ष भारतीय जन मानस मौनव्रती बन चुका था वे अपनी वेदना को भी व्यक्त नहीं कर सकते थे। इसका वेदनाग्राही चित्र मिश्र जी के षब्दों में–

यह जिय धरकत, यह न होइ, कहुँ कोउ सुनि लेई ।

कुछ दोष दै मारहिं अरू रोवन नहिं देई ।।[9]

जो भारत अपने गोधन के लिये विख्यात था, जिसे सोने की चिड़िया कहा जाता था। वह टैक्स और मंहगाई से इतना अकिंचन हो गया कि अब उसके पास नागदेवता को भी दुग्धपान कराने की बेबसी आ गई। मिश्र जी के षब्दो में –

मंहगी और टिकस के मारे हमहिं छुधा पीड़ित तनधाम ।

साग पात लौं मिलै न जिय भरि लेवो वृथा दूध को नाम ।।

तुम्हीं कहा ध्यावै जब हमरों करत रहत गो वंष तमाम ।

केवल सुमुखि अलक उपमाल, तहि नाग देवता तृपन्यताम ।।[10]

प्रेमघन की प्रसिद्ध कृति 'जीर्णपद' का हिन्दी में वही स्थान है जो अंग्रेंजी मे गोल्ड स्मिथ के 'डिजर्टेड विलेज' का है। इसमें कवि ने दन्तापुर नामक गॉव के दुर्दषा को रेखांकित करते हुये तत्कालीन भारतीय ग्रामो का जो स्वरूप वर्णित किया है वह बड़ा ही अमानवीय है। जिस विक्टोरिया को लिटन ने 'कैसरे हिन्द' की उपाधि से उसकी चाटुकारिता में नवाजा था। उसके काल में देष की जनता का क्या हाल था। प्रेमघन जी के षब्दों में –

सूखे वे मुख कमल केष रूखे जिन करें ।
वेष मलीन छीन तन छवि इत जात न हेरे ।।
दुर्बल रोगी नंग धड़ंगे जिनके षिषुगन ।
दीन दृष्य दिखराय हृदय पिघलावत पाहन ।।[11]

ब्रिटिष काल में किसानों और युवाओं की स्थिति बड़ी दैन्यपूर्ण थी। जहाँ युवा बेरोजगारी के महादानव का ग्रास बन रहा था वहीं कृषक अकाल और साहूकारो के ऋण से उऋण नहीं हो पा रहा था –

ढूढ़त फिरत नौकरी जो, नहीं कोउ विधि पावत ।

खेतीहॅू करि सकत, न दुःख सो जनम बितावत ।।[12]

इन सबका मुख्य कारण अंग्रेजो द्वारा देष की आर्थिक शोषण नीति थी जिसका एक मात्र उद्देष्य भारत का षोषण और इग्लैण्ड का पोषण था। भारत के धन पर जहाँ इग्लैण्ड खुष था वहीं भारत और भारतीयों की दषा बेहाल थी। प्रेमघन के षब्दों में –

रहै विलायत जो हर खाय, भारत सो धन रोज कमाय ।

चैन करे जो मौज उड़ाय, तिसका–टिक्कस भी छूट जात ।

यह अचरज देखो तो आप, सोचत बुद्धि विकल हो जात ।।[13]

इस प्रकार देखा जाय तो भारतेन्दु युग के लगभग सभी कवि भारत में व्याप्त जहाँ एक ओर ब्रिटिष षासन की जन उपेक्षा पूर्ण नीतियो का विरोध कर रहे थे वहीं दूसरी ओर भारत में व्याप्त षिक्षा, नषाखोरी, जुआ, वर्गभेद, स्त्रियों की अषिक्षा, वैवाहिक अपव्यय, बहु विवाह, विधवा विवाह निषेध, अनमेल विवाह, बृद्ध–विवाह, बाल विवाह, बाल हत्या इन समस्त लोक अन्तरायों से भी समाज को मुक्ति दिलाने का भरपूर प्रयास कर रहे थे। वे अपने प्रयासों में सफल भी हुये, जो अलख उन्होंने जगाई, निःसन्देंह उससे लोक मांगलिक भाव भूमि प्रतिष्ठित हुई ।

भारतेन्दु जी की सबसे बड़ी विषेषता यह है कि उन्होंने जनता को उद्‌बोधन प्रदान करने के उद्‌देष्य से जातीय संगीत अर्थात् लोक गीत की शैली पर सामाजिक कविताओं की रचना पर बल दिया। इस युग के कवि समुदाय ने मातृभूमि–प्रेम, स्वदेषी वस्तुओं का प्रयोग, बाल विवाह निषेध, मद्यनिषेध, भ्रूण हत्या आदि की निन्दा करते हुए गोरक्षा और षिक्षा के महत्व पर अत्यधिक बल अपनी कविताओं के माध्यम से दिया। लोक मांगलिक आचार संहिता के निर्माण में तत्कालीन संस्थाएँ यथा–ब्रह्मसमाज, प्रार्थनासमाज, आर्यसमाज, रामकृष्णमिषन के अलावा थियोसोफिकल सोसाइटी के सिद्धांतो का भी व्यापक प्रभाव जन–मानस पर पड़ा।

राधाचरण गोस्वामी की कविता 'हमारो उत्तम भारत देस' में कवि ने भारत की जन मंगलकारी भावना को प्रतिष्ठित किया है। बद्रीनारायण चौधरी 'प्रेमघन' ने अपनी काव्य पंक्ति 'धन्यभूमि भारत सब रत्ननि की उपजावनि' के द्वारा भारत के सन्दर्भ में उद्धृत कथन 'भारत सोने की चिड़िया' को रूपायित किया है जो उनके जन–रंजन की भावना को स्वरूपित करता है।

भारतेन्दु युगीन कवि यह भलीभॉति जानते थे कि लोक अन्तरायों को जब तक निर्मूलित नहीं किया जाएगा, तब तक भारत और भारतीयों का कल्याण नही हो सकता है। लोक अन्तरायों के निर्मूलार्थ ही उन्होंने राष्ट्रीय भावना से ओत–प्रोत लोक मांगलिक भाव प्रवणता से युक्त काव्य रचनाएँ की। देष भक्ति की जो भावना द्विवेदी युग में मैथिलीषरण गुप्त की रचना 'भारत–भारती' में लक्षित हुई उसकी प्रेरणा भूमि भारतेन्दु, प्रेमघन, प्रताप नारायण मिश्र, राधाकृष्ण दास आदि की कविताए ही हैं। प्रेमघन की 'आनन्द अरूणोदय', प्रताण नारायण मिश्र कृत 'महापर्व' और 'नया संवत' एवं राधाकृष्ण दास रचित 'भारत बारहमासा' तथा 'विनय' जैसी कविता धर्मिता में देष भक्ति की प्रेरणा जागृत कर लोक मंगल का प्रस्थापन करने का स्तुत्य प्रयास किया गया है ।

प्रेमघन ने अपनी कविता 'हार्दिक हर्षा दर्ष' में ब्रिटिष ईस्ट इण्डिया कम्पनी के स्वार्थ पूर्ण शासन की घोर निन्दा की है। वे इस व्यवस्था को लोक अन्तरायों को बढ़ावा देने वाला मानते थे। विचारणीय बात यह है

कि इस युग की कविता के दो फलक हैं–देष भक्ति और राजभक्ति। देषभक्ति के तौर पर जहाँ भारतेन्दु बाबू 'हिन्दी हिन्दू हिन्दुस्तान' का गुणगान करते हैं, वहीं राजभक्ति में इतना निमज्जित हो जाते हैं कि उन्हें अंग्रेजो के शासन काल में प्रजा मात्र की सुख समृद्धि ही दिखाई देती है जिसका वे मुक्तकंठ से प्रषंसा करते हैं। उन्हें लगता है कि भारतीय समाज में लोक मंगल की प्रत्याषा तभी प्रतिफलित होगी जब भारतीयों पर महारानी विक्टोरिया की कृपा दृष्टि बनी रहेगी। वे लोक मंगल में बाधक रूढ़िगत प्रभावों से जनता को मुक्त होने का आग्रह करते हैं और अधुनातन विचारों एवं षिक्षा को ग्रहण करने की प्रेरणा भी देते हैं। इस युग के कवि समुदाय का मानना है कि जब तक हम अंग्रेजो के नवातन विचारों को आत्मसात नहीं करेंगे तब तक हमें कोई भी लोक अन्तरायों (बुराइयों) से मुक्ति नहीं दे सकता है। इसी कड़ी में भारतेन्दु की 'भारत भिक्षा', 'विजयबल्लरी' एवं रिपनाष्टक, प्रेमघन की 'हार्दिक हर्षादर्ष', 'स्वागत' और राधाकृष्ण दास की 'मेक्डाल्ड की पुष्पांजलि' 'जुबिली' और 'विजयिनी विलाप' उल्लेखनीय हैं।

भारतेन्दु युग में सामाजिक चैतन्यता हेतु कवियों ने अथक प्रयास किया इस युग में जैसा की पूर्व में उद्धृत किया गया है–नारी षिक्षा, विधवाओं की दुर्दषा, अस्पृष्यता आदि को लेकर जो सहानुभूतिपूर्ण कविताएँ लिखी गई उनके प्रतिपाद्य की नवीनता ने सहृदय– समुदाय को विषेष रूप से आकृष्ट किया। लोक मंगल में बाधक इन हीनतर विचारों से समाज को मुक्ति दिलाने का जो उनका संकल्प था वह युगानुरूप बड़ा ही श्लाघ्य है। भारतेन्दु ने अपने नाटक 'भारत दर्दुषा' में वर्णाश्रम धर्म की संकीर्णता का विरोध करते हुए लिखा–"बहुत हमने फैलाये धर्म बढाया छुआछूत का कर्म"।[14] प्रताप नारायण मिश्र ने अपनी कृति 'मन की लहर' में बाल विधवा समाज की कारूणिक दषा का वर्णन करते हुए लिखा–"कौन करे जो नहिं कसकत सुनिविपति बाल विधवन की।[15]

धार्मिक दृष्टि से भारत अनेक धर्मो का समुच्चय है। ऐसे देष में धार्मिक कट्टरता लोक मंगल में सबसे बड़ी बाधा है इसीलिए इस युग के कवियों ने धार्मिक उदारता हेतु प्रषंसनीय कार्य किया। हिन्दु धर्म में ही इतने साम्प्रदायिक मत–मतान्तर हैं कि वह स्वयं में एक अनबुझ पहेली बना हुआ है। जो समन्वयवादी दृष्टि भक्तिकाल में गोस्वामी तुलसीदास में परिलक्षित होती है वही कहीं न कहीं प्रेरणा स्रोत बनकर इस काल के कवियों की चिंता धारा में भी विद्यमान है। प्रेमघन ने अपनी कविता 'आनन्द अरूणोदय' में धार्मिक सहिष्णुता और समन्वय की भावना को इन शब्दों में प्रकट किया है–"सभी धर्म वही सत्य सिद्धान्त न और विचारो"[16] भारतेन्दु जी ने अपनी कृति 'जैन कुतूहल' में भी धार्मिक विद्वेष की कटुनिदां की है।

लोक मंगल के प्रतिष्ठापन हेतु ही भारतेन्दु ने जातीयता और देषहित की भावनाओं को 'जागो अब तो खल बल दलन रक्षहुँ अपनो आर्य मग'।[17] द्वारा जन–मानस को उद्वेलित किया। अपनी 'प्रबोधिनी' नामक कविता में भारतेन्दु जी ने जातीयता, राष्ट्रीयता आदि को बखूबी उद्धृत किया है उन्होंने लिखा है – "डूबत भारत नाथ

बेगि जागो अब जागो"। भारतेन्दु जी की दृष्टि भारत की समकालीन विसंगतियो से अछूती नहीं रही। यही कारण था कि उनकी काव्य कृतियों में इसका स्वरूप प्रतिबिम्बित होता है। इन्हीं का प्रभाव इनके युग के लेखकों पर भी पड़ा। प्रताप नारायण मिश्र ने 'हम आरत भारत वासिन पै अब दीन दयाल दया करिए'।[18] द्वारा और राधाकृष्ण दास ने 'विनय शीर्षक कविता में 'अपने या प्यारे भारत के पुनि दुख दारिद हरिए'।[19] कहकर ईष्वर भक्ति के साथ देष भक्ति की भी प्रतिष्ठा की है।

निष्कर्ष– इस रूप में कहा जा सकता है कि भारतेन्दु जी के नेतृत्व में राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, सांस्कृतिक क्षेत्र में जो भी लोक अन्तराय (बाधा) व्याप्त था जिससे जन–मानस किसी न किसी रूप में पीड़ित था, इस युग के कवियों ने उनके साथ इन अन्तरायों से लोगों को मुक्ति पथ की ओर ले जाने का प्रषंसनीय प्रयास किया। उन्होंने अपने युग–गरिमा को अपने नामार्थ पूर्ण प्रतिष्ठित करते हुए लोक मंगल की स्थापना की। तद्युगीन कवियों विषेषकर प्रताप नारायण मिश्र, बद्री नारायण चौधरी प्रेमघन, राधाकृष्ण दास आदि ने भी मुक्तकंठ से लोक मंगल की न सिर्फ जयकार कर वरन् उसे अपने काव्य–कामिनी द्वारा प्रतिष्ठित करने का वरेण्य प्रयास भी किया, जिसमें वे सफल होकर अमर हो गए।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1 भारतेन्दु हरिष्चन्द्र : डॉ0 लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय पृ0–49

2 हिन्दी साहित्य तृतीय खण्ड डॉ0 धीरेन्द्र वर्मा पृष्ठ 113

3 हिन्दी साहित्य तृतीय खण्ड डॉ0 धीरेन्द्र वर्मा पृष्ठ 113

4 भारतेन्दु ग्रंथावली–सम्पादक ब्रजरत्न दास खण्ड–2 पं. 804

5 भारतेन्दु समग्र पृ0 – 1020

6 भारतेन्दु समग्र पृ0 – 1020

7 भारतेन्दु समग्र पृ0 – 1020

8 हिन्दी साहित्यः तृतीय खण्ड सम्पादकः डॉ0 धीरेन्द्र वर्मा पृ0–133

9 हिन्दी साहित्यः तृतीय खण्ड सम्पादकः डॉ0 धीरेन्द्र वर्मा पृ0–133

10 हिन्दी साहित्यः तृतीय खण्ड सम्पादकः डॉ0 धीरेन्द्र वर्मा पृ0–133

11 हिन्दी साहित्यः डॉ0 धीरेन्द्र वर्मा पृ0 – 133

12 हिन्दी साहित्यः डॉ0 धीरेन्द्र वर्मा पृ0 – 133

13 हिन्दी साहित्यः डॉ0 धीरेन्द्र वर्मा पृ0 – 133

14 हिन्दी साहित्यः डॉ0 नगेन्द्र पृ0 – 451

15 हिन्दी साहित्यः डॉ0 नगेन्द्र पृ0 – 451

16 हिन्दी साहित्यः डॉ0 नगेन्द्र पृ0 – 454

17 हिन्दी साहित्यः डॉ0 नगेन्द्र पृ0 – 454

18 हिन्दी साहित्यः डॉ0 नगेन्द्र पृ0 – 454

19 हिन्दी साहित्यः डॉ0 नगेन्द्र पृ0 – 454